सड़क पर उतरेगा ताजमहल

SP
सम्पर्क प्रकाशन
7/101 आर० एच० वी०
हनुमानगढ़ संगम (राज०)

सड़क पर उतरेगा ताजमहल





प्रमोदकुमार शर्मा

मेरा
यह प्रयत्न
पूज्य मां श्रीमती तुलछीदेवी
और
पिता श्री रघुवीरसिंह शर्मा
को सादर...

नहीं ही होना चाहिए
कोई हस्ताक्षर आदमी से बड़ा !

आदमी के होने में ही निहित है हस्ताक्षर। फिर हस्ताक्षर अपने होने के हों या कविता के। कविता के अक्षर मेरे सामने हैं। इन्हें पढ़ते हुए मुझे लगता रहा कि इन कविताओ के सारे अक्षर अपने समूह रूप मे 'शुरू होने से शुरू होने तक' का एक पूरा कथ्य है।

कविता के कथ्य को समझते रहने के प्रयत्न मे मुझे लगता रहा है कि कविता का कथ्य लिखे जाने से पूर्व दिखता है और यह भी कि देखा जाता सारा ही कविता नहीं होता। भाषा में वह ताव होती ही नही कि दिखने के साथ-साथ ही उपजते रहते सोच के सवेग को झेल सके।

इस सोच के सहारे ही प्रमोद के इस रचना-यत्न 'सड़क पर उतरेगा ताज-महल' को 'शुरू होने से शुरू होने तक' का काव्य-कथ्य कह सका हूं। मेरा यह कहना मुझे इसलिए भी सही लगता है, जब प्रमोद स्वयं ही मान लेता है कि वह 'डूबकर कविता नही लिख पाया है, इसलिए कि वह तैरना जानता है।" तैरने का सीधा अर्थ डूबने के खतरे से बचना है। मुझे यह आत्म-स्वीकृति इसलिए भी शुभ लगती है कि यह स्वीकृति ही किन्ही क्षणों मे रचनाकर्मी को रचना-कर्म में डुबो ले जाती है तब कुछ छूटा हुआ-सा उसके हाथ लगता है। यूं हाथ लगा हुआ ही बोलता है—

"हम बाज से डरें / और अपने कबूतरपन को कोसें...।"

"हमारे चेहरो से। बूढ़ी दीवारों का चूना झांक रहा है...।"

"उल्टी कर देता है। बिखर जाते हैं दूर-दूर। हवा, पानी, सूरज और खीरे..."

ये शब्दार्थ मुझे कड़वे तो लगे ही, मुझे खुभे भी। निरे कड़वे ही लगे होते तो आक्रोश उपजता पर ये तो खुभे भी। खुभने से उपजे दर्द के साथ सोचता हूं कि भीतर उतरते खारे-खारे को घुला-घुलाकर ही बाहर निकाला जाए। तब उल्टी होने से बाहर आई, 'हवा, पानी, सूरज और खीरे' खाए गए 'खीरे और सूरज' अलग चेहरे वाले होगे।

हम बाज से डरें
और अपने कबूतरपन को कोसें
ये तो कोई बात नही
हमें सोचना पड़ेगा
कि
हम कबूतर कैसे बन गए है
और क्यो
हम से ही चेहरे
बाज बनकर
हमारे सामने तन गए हैं ?

आगे...

कविता क्यों

ओ मेरी अज्ञात कविता
मुझे खेद है
मैं तुम्हें लिख न पाया
हालाकि मैं चाहता था
तुम्हें डूब कर लिखूं
क्योंकि मुझे तैरना आता है;
तुम शायद
मेरा उपहास उड़ा सकती हो
कि; कवि इतना चालाक और कायर होता है
हां ! अगर मैं हूं तो
तुम्हारा उपहास सही है
लेकिन मेरी कायरता
तुम्हारे प्रति नही
वल्कि थी उन लोगों के प्रति
जो तुम्हे कभी भी न पढ़ पाते
अब मैं तुम्हें कैसे समझाऊं
कि तुम्हारी पीड़ा को वे,
कैसे बाचते
वे तो पहले से ही पीडित है
तुम्हारी धुआ-धुआ जिन्दगी से

उन्हें क्या वास्ता
क्योंकि उनके चूल्हों से
खाने की गन्ध नहीं
ख्वाहिशों का धुआं उठता है
जो पी जाता है उनकी भूख
और डाल देता है उन्हें फिर से
एक गन्दे गटर में
जहां पर ढो रही है कुर्सियां
कुर्सियों को
जिनके चेहरे गायब हैं
और नसों में
बह रही है गन्दी नालियां डर की
ऐसे में
तुम बताओ !
तुम्हारी करुण कथा
मैं किनसे कहता ?
इन मिट्टी के कबंधों से
अच्छा ही हुआ
जो तुम मुझसे
लिखी नहीं गयी
वरना मैं पागल करार दिया जाता
और तुम भी उपेक्षिता-सी
दम तोड़ रही होती किसी किताब में
हां,
अब तुम्हारे सामने
सभी उपेक्षित हैं
मैं भी,
फिर भी...
तुम चाहो लिखा जाना
तो मैं सहर्ष तैयार हूं
पर क्या इतना सुनकर भी
तुम लिखा जाना पसंद करोगी ?

मैं आपसे क्षमा चाहता हूं

मैं आपसे क्षमा चाहता हूं
भद्र पुरुषो, क्षमा !
ये बांसुरी—
जिसकी धुन आपको प्रिय लगती है बहुत
अब नही बजा सकता मैं,
शायद/आप नही देख पा रहे हैं
लेकिन इसके छिद्रो में
किसी ने/कुर्सी के पाए ठोक दिए है,
अब आप ही बताइए
इस गूंगी-बहरी बासुरी को कैसे बजाऊ ?
मैं मानता हूं/आपके अनुरोध पर
गाहे-बगाहे/मैं इसे बजा दिया करता था
लेकिन अब/मेरे फेफड़ो में दम कहा !
वहा तो सिर्फ भुखमरी का बलगम है
जो खद्बदाने लगता है
जरा-सा दम भरते ही,
हां, आपकी नाराज़गी वाजिब है
मुझे हर हाल मे/इसे बजाना ही चाहिए
किन्तु क्षमा करें
मैं नीरो नही हूं !

प्यार . चित्र—एक

मुझे सिर्फ
'कहना' था
और तुमने
सिर्फ सुनना !
बस...
न मैं कह पाया
न तुम...
और फासला
एक उम्र हो गया

प्यार : चित्र—दो

देखना यहां
इस मूर्ति की आंख
जरा ठीक नहीं
प्यार का कोई भाव नहीं
तुमने कहा
और मैंने मान लिया
पर मैं
तुम्हारी आंखें नहीं देख पाया।

बरसात में फूल

पहले भी
खिले होंगे
बरसात मे फूल
मैंने नही देखे :
आगे भी खिलेंगे
बरसात में फूल
मैं नही देख पाऊगा
किन्तु,
मैं ये जान गया हू
जब-जब भी खिलेंगे
बरसात मे फूल
वे
तुम्हारी तरह सुन्दर होगे
और मैं
वहा होऊगा जरूर
पानी की
छिटकी बूद-सा !

लड़की—एक

मैंने कहा
लड़की मौन थी
तुमने कहा
हां सड़क भी !
सोचता हूं
लड़की
सड़क कब बन गई ?

लड़की—दो

लड़की की आंखों में
आंसू थे
या आंसुओं में लड़की थी
बात समझ में न आई
क्योंकि
लड़की के पिता की
मूछ का एक बाल
झुक गया था
और मां की आंखें सूनी थीं !

समझ—एक

एक बार फिर
तुमने मुझसे कुछ कहा
एक बार फिर
मैंने कुछ नहीं सुना
और दोनों ही
एक संवादहीन इतिहास का
हिस्सा बन गए

समझ—दो

नफ़रत करते है लोग
बेटियां होने से
और प्यार करते है
अपनी पत्नियों से !
लोग पागल नही है
पर...
औरतें भी नही है
समझदार !

फ़ासला

बात
झील तक जाने की थी
मैं सोचता रहा
कल जाऊंगा—कल !
पर जा न सका
हर बार रेत ने पसर कर
मेरे पांव जड़ कर दिए
झील दूर होती गई
अब मेरे और झील के बीच
रेत का समन्दर है
जिसे न मैं पार कर सकता हूं
न झील !

जाने क्यों—एक

आजकल
शामे रग छोड़ गयी हैं
नदी के पानी मे
पानी नही बचा है
पेड़ो के पत्ते; मानो
चोरी पकड़े जाने से
पीले पड़ गए हैं
घास भी
बस 'घास' रह गई है
इधर महबूबा भी आ गई है
पर जाने क्यो
मुझे उसकी जुल्फो से
मदमाती खुशबू नही
कही से
मैले की बू आ रही है !

जाने क्यों—दो

हम वहां
देख रहे थे किला
अचम्भित से !
लोग देख रहे थे हमें
जाने क्यों ऐसा लगा
कि हम
वक्त से पहले ही
खडहर हो गए हैं
और हमारे चेहरों से रक्त नहीं
बूढ़ी दीवारों का
चूना झाक रहा है

ये तो होना ही था

मैंने उसे कहा था
हा, ठीक वही सड़क पर
जहा उससे मेरी
पहली मुलाकात हुई थी
वह तेजी से जा रहा था
अचानक उसकी जीभ
सडक पर आ गिरी
मैं दौड़ा, जीभ उठाई और चिल्लाया—
"सुनो मित्र ! तुम्हारी जीभ गिर गई है"
वह रुका, लौटा
और जीभ लगाकर बोला :
धन्यवाद मित्र ! कष्ट के लिए क्षमा
किन्तु जहा मैं जा रहा हू
वहा—इसकी जरूरत नही है
और जीभ उतार कर
मेरी स्तब्ध हथेली पर रख दी।
कल पता लगा
दरबार ने उसे
मुर्दा करार दिया है
अखबारो मे खबर है

"अपनी सफाई में वो कुछ नहीं बोलता"
मैं जानता हू, उसके मौन को
मैंने उससे कहा था
ठीक वहीं सड़क पर
सुनो मित्र ! तुम्हारी जीभ गिर गई है
राजपथ पर।

खींचता है सांस

गांव है
गोबर पुता घर
कच्चा चूल्हा
और दमकते खीरे हैं
जिन पर भुन रहा है सिट्टा बाजरे का !
वहीं पर
एक बच्चा है
गन्ध से फड़कते नथुने हैं
जानता नही
पर गन्ध से बढ़िया सपने हैं
खीचता है सास
और
पी जाता है
हवा, पानी, सूरज और खीरे !
अब
छिपकली के पेट-सी
चेहरे की खाल है
और नथुनो के नीचे
मुड़े-तुड़े बाल है
जिन्हें वो मूंछ कहता है !!

खींचता है सांस...
एक, दो और...
उल्टी कर देता है
बिखर जाते हैं दूर-दूर
हवा, पानी, सूरज और खीरे।

पहचान

उठा दिया
आहिस्ता से नकाब
देखा
चेहरा गायब था
एक बार नही
बार-बार
हर बार
यही हादसा होता रहा
मेरे साथ
चेहरों की तलाश मे
आकृतियो का भूगोल
ढूंढ़ा दिन रात
पर हाथ !
हाथ नही आया कुछ भी
फिलहाल मैं तलाश मे हूं
एक चेहरे की
जो बेनकाब था
अब नकाब में है
पहचान !
पहचान इत्ती-सी है
कभी-कभी
देख लेता था मैं
उसे दर्पण में

भयभीत चिड़िया

चुपचाप
सब कुछ सह लेना
सब कुछ ! !
हर बार
अन्धेरा दबाता है
मेरी नसें
तड़कने लगता है मेरुदण्ड
आंखें देखना भूल जाती है
जीभ पेट मे कहीं
खोकर रह जाती है
फिर भी सह लेता हूं सब कुछ
हर बार
चुप चा ऽ ऽ प !
इधर
धूप बैठती है आकर मुंडेर पर
किसी भयभीत चिड़िया-सी
कहना चाहती है कुछ
उसके होंठ हरकत करते है
पर मैं
अन्धेरे मे दुबका

नहीं सुनता हूं एक भी शब्द !
क्योंकि मैं धूप से डरता हूं
क्योंकि मैं अन्धेरे की पैदाइश हूं
बस सोच लेता हूं
हर बार
सह लेता है सब कुछ
चुप चाप
हर बार ! ह र बा र !!

इस सुर मन्दिर में

सितार
कोने मे पड़ा
सिसक रहा है
तबले पर, थाप नही
धूल नाच रही है
इस सुर मन्दिर मे
अब
सन्नाटा है, संगीत नहीं
जहां मैं कैद हूं
मुझे साजिन्दों की तलाश है
जो फिर से
छेड़ सकें
सुर और तान
पुकारता हूं जोर-जोर से
मेरी आवाज़
किसी कान तक पहुंचती ही नही
क्योकि बाहर
धमाकों का शोर
बढ़ता ही जा रहा है।

सलीब पर टंगा सूरज

आजकल
कहां निकलता है दिन
कब खत्म होती है रात
आजकल !
हमारा समय बौना हो गया है
और देखते ही
अंधेरे का कोई मरियल-सा सिपाही
दुबक जाता है
उन फंगस वनों में
जहां सलीब पर टंगा सूरज
अपने क्षीण होते सांसों को देखकर
रो भी नही पाता, बेबस !
और हम उसे देख
सोचते हैं इतना भर
इसे कहीं देखा है !
कौन है ये ?

ठूंठ का जवाब

सर्पीले धोरों मे
पानी के वहम-सा
रेत का चिलकारा
ठीक वहीं खड़ा था/खिजड़े का ठूठ
उसकी आंखों में/आंसू नही
हरे पत्तो की पोशाक झलक रही थी
देह; मजदूर की हथेली-सी
कठोर;फटी-फटी
रेत की कोर-कोर जीमने को आतुर !
सन्नाटे मे उछले
मेरे सवाल के पड़ूत्तर में
वह अट्टहास कर उठा
रेत हो उठी पुलकित
किसी नवौढ़ा-सी
ठूंठ ने बांह पसारी
और मेरे सवाल का जवाब
रेत को बांहो में भर
चुपके से दे दिया
पल भर में
मेरी आंखों के हरियल पेड़
मुरझा गए।

वह

तुमने पैर पीटे
वह हंसा
तुमने हाथ-पांव मारे
वह सिकुड़ गया
तुमने नारे लगाए
वह चुप हो गया
तुमने आंखें निकालीं
वह अन्धा बन गया
और ऐन मोर्चे के वक्त
वे सारी तोपें
जो तैयार थीं
उस पर दगने को
दगा दे गयीं
उनके रुख मुड़ गए
और गोले
उसकी बजाय
तुम पर आ गिरे !

सुनो

यूं बार-बार
चेहरे से रेत पोंछना
सरासर बेवकूफी है
शायद, तुम्हें मालूम नहीं
तुम्हारा पूरा चेहरा ही
रेत का बना है
अब क्यों
रेत के बहाने
हौले-हौले
अपना चेहरा पोंछ रहे हो ?

अंधेरा

सब है
किन्तु कोई नही जानता
कहां शुरू होता है
सन्नाटा कब्रिस्तान का
लोग बुदबुदाते है :
पूछते हैं कान में
क्या हम जिन्दा हैं ?
जवाब मे
अट्टहास करता अन्धकार
तान देता है
अपने भय का चंदोवा
लोग छुप जाते हैं उसके नीचे
और बन जाती है दुनिया
एक बड़ी-सी कब्र !

पेड़ और पानी

पेड़ का सवाल
पड़ जाता है बौना
अक्सर पानी के सामने।
इन दिनों
बढ़ती जा रही है
पानी की एकाधिकारी प्रवृत्ति
और घटती जा रही है
पेड़ की छाव !
पेड़ परेशान है
उधर पानी को
बाढ़ से फुर्सत नही !

जरूरी तो नहीं

आग लगने से पहले
धुआ उठे
हर वार
ये जरूरी तो नही
अव
अनुमान लगाना छोड़ो
और सोचो
बिना धुए के आग
कैसे और कहा लगती है ..?
वरना ये धुआ
तुम्हें सदा छलता रहेगा
और भीतर ही भीतर
तुम्हारा सब कुछ जलता रहेगा।

एक परिन्दा : परकटा

कहां तक उड़ पायेंगे
हम सभी, परिन्दे : परकटे।
हमारी
हवाई पट्टियां कील दी हैं
काले चेहरों के सफेद जादू ने
इधर
आता है अभ्यस्त बहेलिया
देखता है
हमें उड़ाकर
सोचता होगा
कहीं उड़ना न भूल जायें परिन्दे ये : परकटे।
मैंने कई बार
साथी परिन्दों को
कबूतर और जाल की कहानी सुनाई है
पर वे फिर भी
उडने का साहस नहीं पालते
अब सोचता हूं
क्या अकेला ही उड़ने का प्रयत्न करूं ?
या बन जाऊं
जाल के फन्दों में उलझा एक परिन्दा : परकटा।

किरच

अगुलियों तले
पिटते अक्षर
दम स्याह ! नही देख पाते
सूखते खेत
टूटता पानी
हाड़ी और सावणी के बीच
दौड़ते
बुढापा और जवानी
बचपन की किसने कही
वो तो आया ही नहीं
बरसात-सा अकाल मे
अगुलियां, जो पिटवाती है अक्षर
झुझला उठी हैं
ककड़ है दाल मे !

दाता—एक

दाता...
दे !
दिया सब कुछ
और भूल गया
हमने लिया
और...
भूल गये सब कुछ !!

दाता—दो

उसने
सोने वालों को जगाया
जगाकर पूछा
"कहो क्या चाहिए?"
सबने पल भर ताका
बोले—
"क्या हम आज़ाद हैं?"
"हां"
सुनते ही लोग
फिर सो गये

वे

जब हम
बरसों से सिंची
खोदी-तैयार की गयी
जमीन मे
दोस्ती का बीज डाल रहे थे
तो, वे
बाहर बैठे
अपनी खुरपियों पर
धार दे रहे थे।

छोटी-सी बात—एक

ये माना
बाहर बहुत अन्धेरा है
पर इतना भी नही
कि तुम्हारे एक हाथ को
दूसरा हाथ दिखाई न दे
ये कोई
छोटी-सी बात नही
जिस पर तुम
"सब चलता है" मार्का मुस्कान फेंक
इस अंधी सुरंग में बढ़ते रहो
ये तो सोचने की बात है
सोचो...कि कही
तुम्हारी आखें
अंधेरे के लिए तो काम नही कर रही ?

छोटी-सी बात—दो

हालांकि
ये छोटी-सी बात है
कि कोई नादान गिलहरी
दम तोड़ दे
आपकी चूहेदानी में फंसकर
बहुत छोटी-सी बात है !
पर/इस छोटी-सी बात के पेट में
जरा झांको और महसूसो
उसकी छोटी-सी जान
तब कितना तड़पी होगी
जब उसकी पूंछ
चूहेदानी का फाटक खा गया था
और मुंह रोटी की ललक में
रह गया था खुला !
तुमने सोचा—
कहां बोल पायी होगी
रोटी के लिए इन्कलाब
पर तुम भी तो,/कहा मिटा पाये थे
उसकी थिर आखों से झांकती
रोटी की तस्वीर को !

मौसम के बहाने

तुमने कहा
मौसम बदल गया लगता है
मैं क्या कहूं
पार साल भी
जब टूटी खिड़की से
रसोई घर तक
चला आया था आंधी का झोंका
रौंदकर सब कुछ
तुम बोली थी
"हां ! मौसम बदल गया है"
तुम भूल जाती हो बहुत जल्द
मैंने तब भी कहा था—
मौसम तो हर बार बदलता है
पर, तुम कब बदलोगी ?

एक था गुलमोहर

एक जगह/अचानक उग आया
गुलमोहर का पेड़
लोगो को आश्चर्य हुआ
यहां-इस जमीन पर गुलमोहर !
इधर गुलमोहर रात भर
चांद की ठन्डक इकट्ठी करता
और दिन में तान देता
सूरज की आग के सामने
धीरे-धीरे लोग
गुलमोहर की छाया में
वक्त गुजारने लगे
उन्हे न सूरज से मतलब था
न चांद से
उन्हे वास्ता था केवल
गुलमोहर की छांव से
सहसा एक दिन
गुलमोहर—जड़ से उखड़ गया
लोग जड़वत् हो गये
लो ! छाया का एक आधार खत्म हो गया
गुलमोहर की अपनी मौत पर

कतई दुःख न था
क्योंकि चंद लोग उसी शहर में
एक गुलमोहर लगाने के लिए
उसके बीज तलाश रहे थे
वे गुलमोहर थे।
गुलमोहर उनमें था
और गुलमोर हमेशा के लिये
तप्त आकाश के नीचे
शहर पर
गहराता चला गया।

अब तो जाग

जाग !
अब तो जाग
फिर कभी हो न हो
ये सवेरा
देख—
देख वहां
उस पार
खड़ा है लाल सूर्य
अर्घ देता
तेरी आशाओं को
फिर भी तू
पड़ा अचेता;
भूल सभी कुछ—
था यहां सब तेरा
जाग...
सोच !
सोच अरे ओ ! सुप्त चितेरे
क्या भूल गया
सुने आँगन को ?
जहां

बनाने थे
तूने मांडणें
तो माड
तू
वार-वार मांड
कोर दे
सूर्य की एक-एक किरण
अपने आँगन मे
सोच !
फैलता जाता है
ये घना अन्धेरा !
जाग...
उठ !
उठ अव तू वहुत सो लिया
बहुत खो दिया
गिन अपने पोरों पर वकाया
और भर ले
अपने तन में, मन में
या
वदन के पोर-पोर मे
सूरज की आग !
तो खीच दे लकीर
दे हांक
ठोक ताल
और ललकार—
रुक जा वही
बदचलन अन्धेरे
नही जानता
है यहा सभी कुछ मेरा !
जाग
अव तो जाग
फिर कभी हो न हो
ये सवेरा !

मौन धरा

चुपचाप
थिर खड़ी है
मौन धरा !
कैसे व्यक्त करेगी
अपनी पीड़ा
या
फिर से दोहरायेंगे
अपनी कथा को
मनु; श्रद्धा और इड़ा !

लाम पर आदमी

आदमी
अपने वक्त से
कब तक जूझ पायेगा
जकड़े ही जायेंगे
वक्त के खूनी पंजों में
आदमी के सपने
सिमट जायेगा इतिहास
फिर से खून भरे पृष्ठों में
काश !
आदमी पहचान लेता
अपने उस चेहरे को
जो उसे लाम पर भेजकर
बुला लेता है
दुश्मन को घर
तो शायद
जीत जाता आदमी
बार-बार हारकर !

शह और मात

तुमने कहा/मैं जरूर मात खाऊंगा
किसी दिन
अब मैं क्या कहूं
जहां रोज पेट
भूख से मात खाते हैं
और राजा के सामने
सभी प्यादे बौने नजर आते हैं
वहां भला/मेरी मात की
क्या औकात !
क्योंकि यहां
हर माता खाया
दूसरे को मात दे रहा है
और बदले में
किसी तीसरे से मात खा रहा है
मित्र मेरे !
अब ये शह और मात की बात छोड़ो
और सोचो
कि इस बिसात को
कैसे बदला जाये
जिस पर खा रहे हैं मात
हम तुम दोनों साथ-साथ !!

ठहरो कामरेड !

ठहरो कामरेड !
हाथ का पोस्टर फाड़ दो
और दीवार पर
लाल स्याही से लिखे
"इन्कलाब" को पोंछ दो
कूची फेंककर
पहले कामरेड का अर्थ समझकर आओ
और तब तक
इन्कलाब मत लिखना
जब तक तुम्हारी आंख
फुटपाथ पर सो रही
लावारिस पगली की
उघड़ी रानों पर टिकी रहे !

तरीक़ा

चुपचाप रोने से
कहीं बेहतर है
मिलकर रोओ
भीतर की उमस को
बेलगाम कर दो
और बुक्का फाड़कर रोओ
ताकि उसे पता तो चले
जिसे तुम रो रहे हो !

ढूंढें सुर गीत के

तुम्हे पूरा अधिकार था
फिर भी तुम गा नही सकते
यही वोझ है...
अव वहुत हुआ
आपसी खूरेजी का
गन्दा परदा फाड दो
और खाण्डी कर दो
उस तलवार की धार
जिससे तुम चाहते थे
करना एक कत्ल !
अह ! ये कितना गलत होता
तुम समझते
कि तुमने अपने शरीक का
खात्मा कर डाला
पर गौर करो
जब काले आदमी के सिर पर भी
आ जाते है सफेद वाल
तो खाई कहा है ?
अव हठ छोड़ो, और आओ
ढूढो सुर गीत के
और मिलकर गाओ।

कोई है साथ

नीरव सन्नाटा
कहीं नहीं है पद्‌चाप।
है, तो मात्र अन्धकार!
फिर भी लगता है
अकेला नहीं हूं मैं
कोई है साथ
जो अन्धेरे और सन्नाटे से बड़ा है
मैं जानता हूं
इस अंधी सुरंग में
कहीं न कहीं
वो रोशनी लिये खड़ा है
इसीलिए मुझे चलना है
बस...चलते रहना है।

मां

मां...
मां की आखो मे
एक सपना था
मां की आंखो में
एक सपना है
मां की आंखों मे
सिर्फ
आंसू होगे
क्योंकि
ये जरूरी है
फिर
मेरी मां
चीजों को
साफ-साफ देख सकेगी

मुट्ठी भर आग

जरूरी हो सकता है
अलाव तापना
तुम्हारी बूढ़ी देह के लिए
राहगीर !
पर इतने भी स्वार्थी न बनो
कि सूरज की गरमास में
भुला दो आग को
आज नही तो कल
तुम्हें आग की जरूरत
महसूस होगी ही
क्योंकि ये ठण्ड
कोहरे का कफन लिए
मौत बन आ खड़ी होगी
तुम्हारे सामने
वह एक ऐसी घड़ी होगी
जब सूरज भी
इसके आगोश मे होगा
सो जरा ठहरो
और बुरे वक्त की खातिर ही सही
मुट्ठी भर आग

अपने सीने के
ठण्डे होते चूल्हे में डाल लो
क्योंकि ये बद्‌जात सर्दी
बढ़ती ही जायेगी
और तुम्हारा सूरज पर
इतना भरोसा भी तो ठीक नहीं !

मेरे घर में आग

मेरे घर में
चूल्हा नहीं, किन्तु
आग है
मैं बेफिक्र था
क्या कर सकती है
बिना लकड़ी की आग
किन्तु कल अचानक
रसोई से निकल कर, आग
मेज़ पर आ गई
मैं स्तब्ध
आग है पर आंच नहीं !!
कुछ पल आग ने मुझे घूरा
और बोली
"मैं उदास हूं"
"उदास हो"
मैं बड़बड़ाया :
"हां, जरा सोचो
मेरे होने का क्या अर्थ
एक पेट की आग है
एक मैं हूं

उसका होना सार्थक
मेरा कित्ता व्यर्थ !
मैं फुसफुसाया :
"उसके लिए ही तो तुम्हें..."
"हां जलाते हो
और बुझा देते हो
पूछती हूं तुमसे
आग से आग कब तक बुझाओगे
या कभी
मुझे ये भी तो बताओगे
कि रसोई के अलावा भी
मेरे लिए कहीं
कोई न कोई काम है जरूर !

जड़ें

मैंने
बोलना छोड़ दिया है
क्योंकि
लोगों ने चुप रहना सीख लिया है
फिर भी शोर है !
मैं जड़ तलाश कर रहा हूं शोर की
फिर बोलूंगा
तब लोग भी चुप नहीं रहेंगे !

कल को—एक

उन्होने
बुलडोजर चलाए
और तुम्हारे घरौदो को तोड़कर
चले गए अपने छज्जों पर
पर तुम...
तुम देखते रहे सिर्फ।
क्योकि तुम्हारे हाथों ने
मुकाबले की भाषा सीखी ही नही
वे तो बस
जानते है इतना भर
कि उनके जाते ही
फिर से जुट जाना होगा
कच्चे ढूहो को पड़छती
और दीवारों को आकार देने में
इस बात से बेफिक्र कि
कल को
वे फिर भी आ सकते है।

कल को—दो

पर्वत कब बोला
उसे देखो,
नदी ने कब चाहा
उसे छुओ,
पेड़ ने कब कहा
उसे चाहो ?
सब लीन थे स्वयं मे
सुख बांटते—सुख भोगते
भले ही
छीन ली हो तुमने
खण्ड-खण्ड शिलाएं पर्वत से
सोख ली हों
बूंद-बूंद नदी की या
कर दिया हो तब्दील
पेड़ को ठूंठ में
कहना ही पड़ेगा तुम्हें, कल को
यहा था पर्वत
यहां बहती थी नदी
यहा था एक घना पेड़ ।

कल को—तीन

तुम्हारा कब्जा
पुल पर हो सकता है
नदी पर नही
तुम कर सकते हो तारबन्दी
पुल की सीमाओ पर
या, धकिया सकते हो हमे
सीमाओ से परे तक
किन्तु
पुल का क्या
रहे ना रहे, कल को !
ये भी हो सकता है
नदी समझ ले हमारी भाषा
और बहना ही छोड़ दे
पुल के नीचे से।

हाशिये पर

हमारे हाथ में
सिर्फ
कलम-दवात ही नही
कोरा कागज़ भी है
हम मानते हैं
अब तक हमने खूब लिखा
पर लोग पढ़ते रहे
हाशिये पर लिखी
तुम्हारी, लाल स्याही की टिप्पणी।
पर सुनो—
हम एक और एक जोड़ेंगे
ये तय है
इस बार कागज पर हम
हाशिया नही छोड़ेंगे।

सड़क पर उतरेगा ताजमहल

तुम
बदल सकते हो
सब कुछ, पर
हमारे इरादे नहीं
क्योंकि वे
तुम्हारी व्यवस्था के पुर्जे नही
हमारी सोच के हथियार हैं
बस इतना जान लो
तुम्हारा रक्त सना चेहरा
अब ज्यादा दिन नही दिखेगा
ताजमहल मे
क्योंकि हमारी
ताजमहल से बात हो रही है
वो भी
सड़क पर आने को तैयार है।

बात करें

आओ
हम-तुम
बात करें
कोई भी बात
जिसमे कोई शर्त न हो
और
बीच में
कही भी
शक की कोई पर्त न हो
क्योंकि
इन दिनों
बातें कम हो रही है
बहुत कम !
देखो—
इधर पलकों के कोर
अचानक कांप जाते हैं
और ना ही
होंठो पर लगे पैबंद
चेहरो का
नंगापन ढांप पाते है

ये सब
बन्द करना होगा
क्योंकि
हमारे पेटे
ये सब
बहुत खतरनाक है
हमें
इस
अंधेरे की जद में
बाहर निकलना है
और
पकड़ने हैं
धूप के कोने
ताकि
हम बिछा सकें
यारों के लिये
दिल में
नरम बिछौने !
या
आओ
हम-तुम
बात करें
कोई भी बात···!

बच्चों के नाम

सुनो बच्चे !
अब
सांप-सीढ़ी खेलना छोड़ दो
क्योंकि
तुम नही जानते
अब
सांप और सीढ़ी मे
भेद नही रहा !
वो जगह,
जहा तुम
पापा जैसी पैन्ट की चाह लिये
बड़े हो रहे हो
अब
अंधेरे से भर गयी है
वहां
सीढ़ियां सांप का
और सांप
सीढ़ियों का काम कर रहे हैं
ज्यादा अच्छा रहेगा
तुम

रगों मे गेली
क्योंकि
मन को
रग से ही पहचानोगे तुम
कि कहा है गोड़ी
और कौन है साप !

अब तो चेत

दीप
जलाना चाहते हो
तो
दीप बुझाओ मत !
तुम्हें तो
बुरी आदत पड़ गयी है
एक दीप
जलाने के लिये
चार बुझा देते हो
और
इस बात पर
खुश हो कि,
तुम्हारे घर मे रोशनी है !
मैं कहता हूं
वक्त है
सभल जाओ
क्योंकि
अंधेरे की जात
बडी बदजात होती है
अगर यू ही चलता रहा

तो एक दिन
ये मारक अंधेरा
तुम्हारे दीपक को भी लील जायेगा
सो चेत जाओ
आओ !
और मिलकर
हम-तुम
एक दीप जलाए !

दिल्ली में बच्चे

ओस भीगे पत्तो से
जमना की
सड़ांध मारती
बस्तियो तक
दिख जाते हैं मुझे
कही-कही
बच्चे !
बच्चे—सफेद-नीली पोशाक मे
बच्चे—सफेद-नीली चमडी मे !
जिन्हें देख
मैं हो जाता हूं भयभीत
पल में/चमक उठता है अतीत !
ओफ्फ ! मेरी ही तरह
इन बच्चों की
नीली आखो मे...
इन बच्चों की
पीली आखो मे...
पलने वाले सपने
बहुत सुन्दर है
बहुत सु न्द र है...!!

कच्ची नींद में

माँ के आँगन में
फूल थे, पौधे थे, चाँद थे, तारे थे,
यहाँ तक कि
ब्रह्माण्ड में फैले
समूचे ग्रह सारे थे
पर भूल गयी थी
माँ...कि,
उसके किसी नादान बेटे ने
बना दिये हैं छेद
आँगन में !
और खो गया है
कहीं बाहर और
किसी [illegible] में
किन्तु माँ,
आखिर माँ थी
उसने कभी तो,
दे [illegible] था
बेटा
हर बात ही
है [illegible]

कि छेद
उसके बेटे ने किये हैं
इसीलिये
छलनी-से आंचल को
वह अब तक नहीं सिये है
क्योंकि
वह ये भी जानती है
बेटा; उसका बेटा !
भले ही
सो रहा है रंगमहल में
पर उसकी नींद
बहुत कच्ची है
जब भी टूटेगी
वह
सिर झुकाये
आयेगा
और साथ में
लायेगा
सूई-धागा
सियेगा सभी छेद
और सोयेगा फिर से
आंखें खुली रख
पर,
किसी रंगमहल में नहीं
अपनी मां के आंचल मे !

...और एक दिन

हम मानते हैं
क्रूस पर टगा है
हमारे बदन का लहूलुहान ढांचा
जिसमे तुम ठोक देते हो
जी चाहे या
गाहे-बगाहे
कोई पेचदार नुकीली कील
और
अपने हथौडे की मारक शक्ति पर
अट्टहास करते
डूब जाते हो
हमारे टूटने की प्रतीक्षा मे।
किन्तु
हम जानते हैं
एक दिन तुम
प्रतीक्षा मे टूट जाओगे
तब सोचो भला
क्या हमारे जख्मी पजों से बच पाओगे ?

घुचमुचिये

इन दिनों
हस्ताक्षरों से
मुझे नफरत हो गई है
मैं चाहता हूं
नन्हा विन्नी
बना दे घुचमुचिये
तमाम सफेद कागजों पर
ताकि फिर कोई हस्ताक्षर
आदमी से बड़ा न हो पाये

परिभाषा

मुझसे पूछा
कौन हो तुम
मैंने कहा
कौन हूं मैं !
इससे पहले
पसरता सन्नाटा
पेट का भूगोल
आंतो के जाल मे उलझ गया
वह फिर बोला
मैं तुम्हारा "मैं" हूं
बोलो-मुझसे जीत पाओगे
मैंने कहा
हा जीत जाऊंगा
पर हार की परिभाषा
मैं लिखूगा ।

□□

जहां तक मुझे पता है, प्रमोद का जन्म मजदूर दिवस को